प्रवासी भारतीय समुदाय में सांस्कृतिक विविधता

डॉ. मुन्ना लाल गुप्ता

भारतीय डायस्पोरा के बारे में शब्दावली संबंधी पहेली का संबंध न केवल भारतीयों और विदेशों में उनके समुदायों के लिए डायस्पोरा शब्द के प्रयोग से है, बल्कि विशेषण 'इंडियन' में निहित 'भारत' के विचार से भी है। यह पहचानना महत्वपूर्ण है कि जिसे भारत कहा जाता है, उसकी सीमा पिछले सौ वर्षों के दौरान एक जैसी नहीं रही है। इस प्रकार, विभाजन से पहले (1947 में) भारत छोड़ने वालों और उनके वंशजों के लिए, संदर्भ बिंदु उपमहाद्वीपीय भारत है (जिसमें वर्तमान पाकिस्तान और बांग्लादेश शामिल हैं) जबकि विभाजन के बाद भारत छोड़ने वालों के लिए, यह भारत का राजनीतिक राज्य है जैसा कि अभी मौजूद है। दूसरे शब्दों में, सैद्धान्तिक रूप से, भारतीय डायस्पोरा एक सापेक्षवादी रचना (रेलेटिविस्टक कंस्ट्रक्ट) है और यह अभिव्यक्ति/प्रदर्शन में विषमांग/विजातीय (हेट्रोजीनस) है। (जयराम, एन: 2001, 2004)

प्रवासी भारतीय उन भारतीय समुदायों से मिलकर बना है, जो इतिहास के विभिन्न कालखंडों में क्रमिक रूप में अलग-अलग व्यवस्थाओं के अंतर्गत भारत से विश्व के अनेक स्थानों के लिए प्रवासित हुए और वहीं बस गए। इन्हें आज भारतीय डायस्पोरा/अप्रवासी भारतीय (नॉन रेजिडेंट इंडियन)/नया डायस्पोरा/ पुराना डायस्पोरा/प्रवासी भारतीय भारतवंशी (पर्सन्स ऑफ़ इंडियन ओरिजिन) जैसे नामों से भी जाना जाता है। यह अनुमान है कि साठ लाख भारतीय नागरिकों के अलावा, पूरी दुनिया में भारतीय मूल के दो करोड़ से अधिक लोग हैं। (भारत सरकार 2001: 680) अगर 10,000 को न्यूनतम आंकड़े के रूप में लेते हैं तो प्रवासी भारतीयों का निवास पचास देशों में हैं, और सात अन्य देशों में, उनकी संख्या 5,000 और 10,000 के बीच होगी। छह देशों (मलेशिया, म्यांमार, सऊदी अरब, दक्षिण अफ्रीका, यूनाइटेड किंगडम और संयुक्त राज्य अमेरिका) में इनकी संख्या एक लाख से अधिक होने का अनुमान है। भारतीय मूल के लोग फिजी (49 फीसदी), गुयाना (53 फीसदी), मॉरीशस (74 फीसदी), त्रिनिदाद और टोबैगो (40 फीसदी) और सूरीनाम (37 फीसदी) में सबसे बड़ा जातीय समुदाय बनाते हैं। वे हांगकांग, मलेशिया, सिंगापुर और श्रीलंका जैसे एशियाई देशों और दक्षिण अफ्रीका एवं पूर्वी अफ्रीका में पर्याप्त अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में हैं। ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, यू.के. और यू.एस. में भी इनकी महत्वपूर्ण उपस्थिति है। (लाल, ब्रिज, वी: 2006)

भारतीय डायस्पोरा के बारे में शब्दावली संबंधी पहेली का संबंध न केवल भारतीयों और विदेशों में उनके समुदायों के लिए डायस्पोरा शब्द के प्रयोग से है, बल्कि विशेषण 'इंडियन' में निहित 'भारत' के विचार से भी है। यह पहचानना महत्वपूर्ण है कि जिसे भारत कहा जाता है, उसकी सीमा पिछले सौ वर्षों के दौरान एक जैसी नहीं रही है। इस प्रकार, विभाजन से पहले (1947 में) भारत छोड़ने वालों और उनके वंशजों के लिए, संदर्भ बिंदु उपमहाद्वीपीय भारत है (जिसमें वर्तमान पाकिस्तान और बांग्लादेश शामिल हैं) जबकि विभाजन के बाद भारत छोड़ने वालों के लिए, यह भारत का राजनीतिक राज्य है जैसा कि अभी मौजूद है। दूसरे शब्दों में, सैद्धान्तिक रूप से, भारतीय डायस्पोरा एक सापेक्षवादी रचना (रेलेटिविस्टक कंस्ट्रक्ट) है और यह अभिव्यक्ति/प्रदर्शन में विषमांग/विजातीय (हेट्रोजीनस) है। (जयराम, एन: 2001, 2004)

पिछली आधी सदी में विदेशों में रह रहे भारतीय समुदायों पर अध्ययन (जैन ग्रंथ सूची: 1993, जयराम: 2009 लाल: 2006) पुष्टि करते हैं कि भारतीय प्रवासी एक विषम और जटिल घटना है, जिसके अंतर्गत विविध चरण, स्वरूप और प्रक्रियाएं शामिल हैं। इसलिए भारतीय डायस्पोरा को परिभाषित करने के पहले इसके विविधता से संबंधित विविध पक्षों को देखना आवश्यक है। महत्वपूर्ण बात यह है कि इसकी विविधता के अधिक से अधिक पहलुओं को हम जितना हो सके, उतने दृष्टिकोणों से समझने की कोशिश करें ताकि प्रवासी भारतीय समुदायों से संबंधित कोई सिद्धांत बनाने के लिए सही आंकड़े और निष्कर्ष के निर्माण के लिए हममें पर्याप्त समझ हो।

भारतीय डायस्पोरा में विविधता, एकरूपता के बजाय उसके अंदर की अनेकरूपता के अस्तित्व को संदर्भित करती है। लॉडेन (1996) ने विविधता के प्राथमिक और द्वितीयक आयामों के बीच अंतर किया है। प्राथमिक आयामों के अंतर्गत नस्ल, आयु, लिंग और नृजातीयता जैसी मुख्य विशेषताएं शामिल हैं जिन्हें हम बदल नहीं सकते हैं और हमारे स्वयं के निर्माण के लिए अधिक महत्वपूर्ण हैं। धर्म, भाषा, शिक्षा और आय जैसे आयामों को हमारी आत्म-पहचान के लिए अधिक परिवर्तनशील और कम प्रभावशाली रूप में देखा जाता है। परन्तु, प्रवासी समुदायों के अध्ययन में यह द्विभाजन समस्याग्रस्त है। हालांकि एक व्यक्ति या व्यक्तियों का समूह अपना धर्म बदल सकता है, लेकिन डायस्पोरा में धार्मिक जुड़ाव संबंधी पहचान एक महत्वपूर्ण मार्कर/चिन्ह है। उदाहरण के लिए, त्रिनिदाद में हिन्दू से धर्मान्तरित प्रेस्बिटेरियन एक समुदाय हैं, जो न केवल हिंदुओं, मुसलमानों और अन्य ईसाई संप्रदायों से अलग है, बल्कि अन्य प्रेस्बिटेरियन से भी। इस प्रकार शिक्षा, व्यवसाय और आय के संदर्भ में वर्ग विभाजन के बारे में एक ही बात कही जा सकती है; एक तरफ पेशेवर और उच्च-आय वाले प्रवासी और दूसरी ओर मजदूर वर्ग और निम्न-आय वाले प्रवासी।

थॉमस (1999) किसी भी समाज की आबादी में अंतर और समानता दोनों के महत्व पर जोर देते हैं। मतभेदों या एक या अन्य विभेदक विशेषता पर अत्यधिक जोर देकर (जाति, धर्म या नृजातीयता जैसे पहचान चिह्न) अक्सर समूहों या समुदायों को एक दूसरे के खिलाफ खड़ा किया जाता है। इसके कुछ उदाहरण हैं जिनमें भारतीय प्रवासी समुदाय शामिल हैं; त्रिनिदाद में एफ्रो-ट्रिनिडाडियन और इंडो-ट्रिनिडाडियन या दक्षिण अफ्रीका में अफ्रीकी और भारतीयों के बीच संघर्ष (प्रमुख पहचान चिन्ह/मार्कर के रूप में नस्ल पर अत्यधिक जोर), मलेशिया में हिंदू तमिलों और मुस्लिम मलय के बीच (पहचान चिह्न के रूप में धर्म और नृजातीयता पर अत्यधिक जोर), फिजी में भारतीयों और मूल निवासियो (काईबीती) के बीच (प्रमुख पहचान चिह्न के रूप में नृजातीयता), त्रिनिदाद में हिंदुओं और मुसलमानों के बीच संबंध और मॉरीशस में भोजपुरी और तमिल प्रवासियों के वंशजों के बीच के मामले भी इसी प्रकार के हैं।

समाजशास्त्रियों ने एक व्यक्ति के जीवन विकल्पों को आकार देने वाले किसी समाज में उपस्थित सामाजिक-आर्थिक असमानताओं की ओर इशारा किया है। (जयराम 1987: 23-53) समाज के सदस्यों के रूप में, लोग वर्चस्व और अधीनता संबंधी इन असमानताओं और सत्ता संबंधों को आत्मसात करते हैं और उन्हें आधिपत्य/उत्पीड़न या यहां तक कि वाद (नस्लवाद की तरह) तक ले जाते हैं। इतिहास अधीनस्थ समूहों के प्रभावी मानदंडों और भाषा में समाहित करने के प्रयासों के उदाहरणों से भरा है और इन समूहों ने अपने प्रमुख समूह के सामाजिक-सांस्कृतिक आधिपत्य (नस्लवाद) का मुकाबला करने के लिए अपनी पहचान पर जोर दिया। प्रवासी भारतीय समुदायों के बीच सांस्कृतिक पुनर्जागरण की राजनीति (जयराम: 2003, मुनासिंघे: 2001) गंतव्य भूमि के समुदाय के वर्चस्व के परिणाम के रूप में समझी जा सकती है। विदेशों में प्रवासी समुदायों के बीच स्वभूमि के साथ जुड़ाव और पूर्वज परंपरा और संस्कृति के पुनरुद्धार को इस संदर्भ में समझा जाना चाहिए। (पारेख एवं अन्य: 2003)

भारतीय डायस्पोरा/प्रवासी भारतीयों के संदर्भ में, सांस्कृतिक विविधता के कई आयाम हैं। भारतीय डायस्पोरा में विविधता का प्रारंभिक आयाम उनका भारत से प्रवासन के इतिहास और प्रवासन के स्वरुप से संबंधित है। विदेशों में भारतीयों के प्रारंभिक अप्रवास की अवधि (पूर्व-औपनिवेशिक, औपनिवेशिक, या स्वतंत्रता के बाद) और उनके अप्रवासन की प्रकृति/स्वरुप (अपराधी/सिद्धदोष प्रवासन, अनुबंधित श्रम प्रणाली, कंगनी-मेस्त्री या मुक्त प्रवासन) से जुड़ी है। पुराना डायस्पोरा (जो अब तक पांच या अधिक पीढ़ियों पुराने हैं) का औपनिवेशिक युग के दौरान ज्यादातर प्रवासन गुयाना, मॉरीशस, दक्षिण अफ्रीका, सूरीनाम और त्रिनिदाद और आजादी के बाद जिन्हें नवीन डायस्पोरा (जो मुश्किल से तीन पीढ़ियों पुराना है) कहा जाता है, उनका ज्यादातर प्रवासन ऑस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड, अमेरिका, कनाडा और यू.के. के लिए हुआ। अमेरिका, कनाडा और यू.के.

के नए प्रवासी पुराने प्रवासीयों पर श्रेष्ठता का अध्यारोपण करते रहे हैं।

प्रवासी भारतीय समुदायों में प्रवासन की धाराओं से उत्पन्न विविधता का भी एक आयाम है। कहीं-कहीं इनके हिंसक संघर्षो के कारण भारतीय समुदाय का दमन भी हुआ है। इसके परिणाम स्वरूप भारतीय समुदाय का द्वितीयक/तृतीयक रूप में पलायन भी हुआ है, जैसे: इंडो-गुयाना के लोग उत्तरी अमेरिका, हिंदुस्तानी सूरीनामी के भारतवंशी नीदरलैंड, पूर्वी अफ्रीकी सिख और गुजराती ब्रिटेन के लिए और इंडो फिजियन लोग ऑस्ट्रेलिया और न्यूजीलैंड के लिए प्रवासित होने पर विवश हुए/हो रहे हैं। इस कारण पहली पीढ़ी के प्रवासी समुदाय और द्वितीयक/तृतीयक रूप में प्रवासित होकर आनेवाले भारतीयों के बीच संवाद की परिस्थिति बनी। इस प्रकार की संवाद की परिस्थिति ने प्रवासी भारतीयों के बीच विविधता को समझने के लिए नए पहलुओं को सामने लाया है।

यह सर्वविदित है कि भारत विशाल सामाजिक-सांस्कृतिक विविधताओं का देश है। इस देश के लोग विभिन्न धर्मों और संप्रदायों, जनजातियों और जातियों, परिवार के पैटर्न और रिश्तेदारी प्रणाली, भाषाएं और बोलियां, भोजन प्रणाली और आहार प्रथाएं, पोशाक शैली, पर्व, त्यौहार, संगीत और नृत्य, रीति-रिवाज, परंपराओं जैसे सांस्कृतिक तत्वों से जुड़े हैं। भारतीय जीवन की इन विविधताओं को अपने जीवन के हिस्से के रूप में (जिन्हें सामाजिक-सांस्कृतिक गठरी भी कहा जाता है) स्वभूमि से जुड़ी इन सांस्कृतिक तत्वों की गतिशीलता ने भारतीय प्रवासी समुदायों के बीच सांस्कृतिक विविधता को जन्म दिया है। इन सांस्कृतिक तत्वों में परिवर्तन का क्रम और स्वरुप कई कारकों पर निर्भर करता है। इन कारकों में शामिल हैं: प्रवासित लोगों की संख्या, प्रवासी समुदाय की आर्थिक और राजनीतिक स्थिति और मेजबान/गंतव्य देशों (होस्ट कंट्री) में प्रवासी भारतीयों के बसने से संबंधित सामाजिक और सांस्कृतिक संघर्ष और अनुकूलन से संबंधित अनुभव। प्रवासी समुदायों के सामाजिक-सांस्कृतिक अनुभव को समझने के लिए सैंडविच कल्चर (अटल: 2004), हाइब्रिड कल्चर (शुक्ल: 2005) और सांस्कृतिक पुनर्जागरण की राजनीति (जयराम: 2003) जैसी महत्वपूर्ण अवधारणाएं विकसित हुई हैं।

प्रवासी भारतीयों के बीच में क्षेत्रीय/भाषाई विविधता बहुत ही स्पष्ट हैं। औपनिवेशिक काल में, संयुक्त प्रान्त से अनुबंधित श्रमिक के रूप में फिजी, मॉरिशस, गुयाना, सूरीनाम और दक्षिण अफ्रीका में प्रवासित भारतीय अपनी पूर्वज भाषा फ़िजी हिंदी, समुद्रपारीय भोजपुरी हिंदी, पुरनिया हिंदी, सरनामी और कलकतिया बात बोलते हैं। इसी प्रकार प्रत्येक भाषाई/क्षेत्रीय प्रवासी भारतीय समुदायों का भाषाई-क्षेत्रीय सांस्कृतिक संगठन हैं। इन भाषाई/क्षेत्रीय संगठनों के माध्यम से ये प्रवासी भारतीय अपनी पूर्वज देश की सांस्कृतिक और सभ्यागत धरोहर से जुड़े रहते हैं। प्रवासी भारतीयों से संबंधित विश्व में ऐसे भाषाई/क्षेत्रीय संगठनों में प्रमुख हैं: मराठी महामंडल, आंध्र सभा, अंतरराष्ट्रीय तेलगू संस्था, द वर्ल्ड तमिल कांफ्रेंस, विश्व तमिल कन्फेडरेशन, विश्व गुजराती समाज, गुजरती समाज, उत्तरी अमेरिका का भोजपुरी संगठन (बाना), नार्थ अमेरिका बंगाली कांफ्रेंस आदि। (भट्ट और नारायण: 2010, भट्ट और भास्कर: 2011)

1968 में जब मॉरीशस को स्वतंत्रता मिली, तब तमिल, तेलुगु, मराठी लोगों ने अपनी पूर्वज भाषाओं के पैटर्न को आधार बनाकर पहचान को व्यक्त करना शुरू कर दिया। यह सच है कि इन समुदायों ने अपनी पूर्वज भाषा में कोई दक्षता हासिल नहीं की है न ही इस भाषा का उपयोग आधिकारिक संचार/संवाद के लिए किया जाता है और न ही घरेलू बोलचाल में। यद्यपि, इसने सांस्कृतिक प्रतीक के रूप में अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण किया है। तमिल और तेलुगु संस्कृतियों को बढ़ावा देने में उनकी स्वभूमि/पूर्वज भूमि/जन्मभूमि की यात्राओं के अलावा, इलेक्ट्रॉनिक मीडिया विशेष रूप से टेलीविजन और सिनेमा ने योगदान दिया है।

उत्तर भारत और दक्षिण भारत से भर्ती किए गए गिरमिटिया मजदूर विभिन्न भाषाई और जाति समूहों के थे। हालांकि, उनकी जाति और भाषाई संबद्धता के बावजूद, उपनिवेशों में उदाहरण के लिए, ब्रिटिश गुयाना, मॉरीशस और त्रिनिदाद में उनके समूह की पहचान उस बंदरगाह से बनी जहाँ से वे भारत से रवाना हुए थे। इस प्रकार, जो कलकत्ता (अब कोलकाता) से रवाना हुए, वे कलकतीया कहलाए और जो मद्रास (अब चेन्नई) से नौकायन कर रहे थे, मद्रासी कहलाए। यह दिलचस्प है कि ये समूह पहचान प्रवासी समुदायों में आज तक जीवित हैं। (जयराम 2006: 166-7)

फ्रांस के विदेशी आधिपत्य वाले क्षेत्रों में विशेष रूप से पश्चिमी हिंद महासागर में रीयूनियन, गुआदेलूप और मार्टीनिक के फ्रेंच कैरेबियाई द्वीपों में ये फ्रांसिसी बोली वाले फ्रैंकोफोन भारतीय समुदाय 150 वर्ष से अधिक पुराने हैं। ये फ्रैंकोफोन भारतीय समुदाय विश्व के अन्य क्षेत्र में निवास करने वाले प्रवासी भारतीय समुदाय से कई स्तरों

पर विविधता प्रदर्शित करते हैं। ये श्रमिक मुख्यत: फ्रेंच कोलोनियों यथा: पांडिचेरी (अब पुडुचेरी), करैकल, चांदनागोर और माहे से थे। (लाल, ब्रिज वी: 2006)/प्रवासी भारतीय समुदायों में एक ही धर्म को मानने से एक सजातीय समुदाय का निर्माण नहीं होता क्योंकि प्रत्येक धार्मिक समुदाय कई पंथ, पूजा-कर्मकांड की पद्धति और सांस्कृतिक विविधताओं से चिह्नित होते हैं (उदाहरण के लिए, 1990 की जनगणना के अनुसार, त्रिनिदाद और टोबैगो में सभी मुसलमानों का 95 प्रतिशत देश की आबादी का लगभग 6 प्रतिशत भारतीय मूल के थे (केंद्रीय सांख्यिकी कार्यालय: 1994)। वे इस्लाम की अलग-अलग व्याख्याओं के साथ कम से कम पांच अलग-अलग समूहों से संबंधित हैं; परंपरावादी, तब्लीग जमात, वहाबी सुन्नी, आधुनिकतावादी और शिया। इस जुड़वां द्वीप वाले देश में उस धर्म को मानने वाले लगभग 6 प्रतिशत मुस्लिम लोगों के लिए मुसलमानों के सत्रह संगठन हैं। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह है कि मुसलमान (त्रिनिदाद में) समाजों में अन्य धार्मिक संप्रदायों की तुलना में आपस में अधिक संघर्ष और तनाव की स्थिति है। (मुस्तफा: 2004) त्रिनिदाद में भी हिंदुओं के बारे में इसी तरह का अवलोकन किया जा सकता है। (वर्टोवेक: 1992) इसी प्रकार, मॉरिशस, फिजी में भारतवंशी हिन्दू समाज कई धार्मिक पंथों यथा: सनातनी, आर्य समाजी, कबीर पंथी, रविदासी, शिवनारायण संप्रदाय, सतनामी, सिख आदि में विभाजित हैं।

प्रवासी भारतीयों में विविधता का एक और आयाम इनके द्वारा सामाजिक-सांस्कृतिक गठरी के एक हिस्से के रूप में साथ लिए जाने वाली सामाजिक संस्थाएं थीं जिसने मेजबान देश के नए परिवेश में अनिवार्य रूप से परिवर्तन की ताकतों का सामना किया। इसलिए, एक प्रवासी समुदाय का अध्ययन करते समय, धारण (रिटेंशन) बनाम परिवर्तन (चेंज) की पहेली को हल करने की तुलना में सामाजिक संस्थाओं के 'रूपांतरण' (मेटामोर्फोसिस) पर ध्यान केंद्रित करना आवश्यक है। औपनिवेशिक काल में भारत से प्रवासित हुए समुदायों में हिंदू धर्म की एक अभिन्न सामाजिक संस्था के रूप में 'जाति' का रूपांतरण (जयराम: 2006) सामाजिक संस्थाओं की गतिशीलता का अध्ययन और विश्लेषण के लिए एक महत्वपूर्ण पहलू रहा है। (वर्टोवेक: 1992, 1996)

इस प्रकार, प्रवासी भारतीयों में विविधता का अध्ययन यह बताता हैं कि विदेशों में एक भारतीय समुदाय की जगह कई प्रवासी भारतीय समुदाय हैं। प्रवासी भारतीयों में क्षेत्र, भाषा, धर्म और जाति/उप-जाति आधारित पहचान की अभिव्यक्ति का मतलब यह नहीं है कि प्रवासी भारतीय स्थायी रूप से खंडित हैं। प्रवासी भारतीय विविधता के मार्कर्रों/चिन्हों की अनदेखी करते हुए राजनीतिक स्तर पर वे कभी संगठित हो सकते हैं और ये मेजबान/गंतव्य देशों में ऐसी एकता को ऐतिहासिक कालों से प्रदर्शित करते रहे हैं। आवश्यकतानुसार, यदि जाति की पहचान को आगे किया जाता है, तो उप-जाति की पहचान निलंबित हो सकती है, यदि धार्मिक पहचान को आगे किया जाता है, तो जाति की पहचान को निलंबित किया जा सकता है, यदि क्षेत्रीय या भाषाई पहचान को आगे किया जाता है, तो जाति और धार्मिक पहचान को निलंबित किया जा सकता है और यदि भारतीय पहचान/ भारतीयता के लिए आह्वान किया जाता है, तो अन्य सभी पहचानों को निलंबित किया जा सकता है। कुल मिलाकर, भारतीय प्रवासी कई प्रकार की सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक या राजनीतिक विविधता के बावजूद ये व्यापक स्तर पर एकता के विभिन्न स्तरों पर जुड़े हैं। मॉरिशस, फिजी, त्रिनिदाद-टुबैगो और आज अमेरिका , ब्रिटेन में प्रवासी भारतीयों का राजनीति के शिखर पर पहुंचना इसी एकता को प्रदर्शित करता है। प्रवासी भारतीय में विविधता को देखते हुए, प्रवासी भारतीयों का भारत और भारतीय नागरिकों की ओर एवं भारत और भारतीय नागरिकों का प्रवासी भारतीयों की ओर उन्मुखीकरण (ओरिएन्टेशन) का स्तर भी भिन्न है। (जयराम, एन: 2011) उसी प्रकार, मातृभूमि में वापसी का भी विचार प्रवासी भारतीयों के अलग-अलग समुदायों में एक जैसा नहीं है। (ब्राह्म, 1996: 16)

निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं प्रवासी भारतीयों के बीच उपस्थित विजातीयता (हेट्रोजेनिटी) और भारत के प्रति विषमांग रुझान (एसेमेट्रिकल ओरिएंटेसन) को अगर केन्द्रीय तत्व के रूप में मानकर उनके साथ पारस्परिक हितों और योजनाओं को प्रतिपादित किया जाए तो उनके साथ हमारे अच्छे संबंधों को विकसित करते हुए उनकी अपेक्षाओं पर हम खरे उतर सकेंगे। प्रवासी भारतीय समाज में उपस्थित विविधता को ध्यान में रखकर अगर भारतीय राज्य द्वारा उनकी अपेक्षानुसार योजनाएं बनायी जाए तो वैश्विक गांव के रूप में विकसित होती दुनिया और वैश्विक राजनीति में प्रवासी भारतीयों का सक्रिय साथ और समर्थन हमें कई स्तरों पर प्राप्त हो सकता है।

❖

सहायक प्रोफ़ेसर, प्रवासन एवं डायस्पोरा अध्ययन विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा (महाराष्ट्र) भारत
ईमेल : mlgbharat@gmail.com मोबाईल: +91- 9028226561

कविराय के बहाने

डॉ. देवी प्रसाद तिवारी

''झरोखे के सामने दूर दो मस्त हाथी लड़ रहे थे। सूँड़ उठाये ये चिंग्गाड़ रहे थे। उन्होंने बीच की कच्ची मिट्टी के अग्गड़ को ढ़हा दिया और दाँत भिड़ाये वे पिल पड़े। हाथों में अंकुश और तेज भाले लिए दो-दो महावत दोनों पर सवार थे और उसके साथ भाले चर्खियां और आतिशबाजी लिए पैदल महावत अलग। अग्रपाद उठाये हाथी सामने के हाथी पर झपट रहा था और उस पर इस जोर आक्रमण कर रहा था कि उसके पीछे बैठा भाले वाला महावत अपने आपको संभाल न सका और धाराशायी हो गया।उस ओर का हाथी भी क्रुद्ध हो उठा, उसने बढ़कर उसकी चुनौती स्वीकार की और इतना खदेड़ा की धाराशायी महावत उठने से पहले ही कुचल दिया गया। कोलाहल मच गया। उधर का हाथी भारी पड़ रहा था। यह हाथी भाग खड़ा हुआ। बिगड़ा हाथी उसका पीछा करते हुए दौड़ा। महावतो द्वारा सँभलता न देख आतिशबाजी और चर्खियों वाले दौड़ पड़े। चर्खियों की आवाज और लपटों से किसी तरह मद द्वीप का क्रोध शान्त हो पाया। बादशाह का यह मनोरंजन बहुत महंगा पड़ा। एक बहुमूल्य मानव जीवन लुट गया।''

पंण्डित राज जगन्नाथ के बहाने भोला शंकर व्यास ने अपने उपन्यास समुद्र संगम का आरम्भ हिंदू रियाया पर हो रहे अत्याचार से किया है।अजीब बात है कि हिंदू रियाया अपने ही देश में, अपने ही धर्म के प्रति अनुराग व्यक्त करने के लिए कर चुकाने को बलात बाध्य है ऐसा नहीं करने पर उसे अपमानित होना पड़ता है। नए मन्दिरों के निर्माण पर प्रतिबन्ध के बहाने शासन की सह पर या फिर बादशाह को खुश करने के लिए पुराने मंदिरों को ढ़हाने का कुकृत्य बदस्तूर जारी है और जब रियाया या फिर उसके प्रतिनिधि इस पर सवाल खड़ा करते हैं तो जबाब मिलता है कि नए के रख रखाव के लिए शासन के पास धन नहीं है। हिन्दुओं के प्रतिनिधि कवीन्द्राचार्य जी को मामूली से फौजदार के सामने मिन्नतें करनी पड़ती है कि रियाया को कर से छूट दी जाए लेकिन उस पर जैसे कोई प्रभाव ही न पड़ा, उल्टे जबरन कर वसूली होने लगी। कालिन्दी के तट से शासन द्वारा जारी फरमान का अक्षरश: पालन होगा ऐसी नियति न थी। मनबड़ किस्म के फौजदारों को कट्टरपंथिओं का समर्थन प्राप्त था और कट्टरपंथियों को खुश रखने की उनमें बेहतर समझ थी। यहां सिर्फ फौजदार को ही दोषी ठहरा देने से बात अधूरी रह जाती है दरअसल नृशंसता की इस प्रवृति का आरम्भ वहां से होता है जब तरुणाई की ओर दबे पाँव बढ़ते सल्तनत के राजकुमारों को लड़ते हाथियों में तो रुचि है लेकिन उनके पैरों तले रौंधें गये महावतों की चीखों से उनमें आह तक नहीं उभरती। इसकी एक झलक भी उपन्यास में ही देखने को मिलती है। ''झरोखे के सामने दूर दो मस्त हाथी लड़ रहे थे। सूँड़ उठाये ये चिंग्गाड़ रहे थे। उन्होंने बीच की कच्ची मिट्टी के अग्गड़ को ढ़हा दिया और दाँत भिड़ाये वे पिल पड़े। हाथों में अंकुश और तेज भाले लिए दो दो महावत दोनों पर सवार थे और उसके साथ भाले चर्खियां और आतिशबाजी लिए पैदल महावत अलग। अग्रपाद उठाये हाथी सामने के हाथी पर झपट रहा था और उस पर इस जोर आक्रमण कर रहा था कि उसके पीछे बैठा भाले वाला महावत अपने आपको संभाल न सका और धाराशायी हो गया। उस ओर का हाथी भी क्रुद्ध हो उठा,उसने बढ़कर उसकी चुनौती स्वीकार की और इतना खदेड़ा की धाराशायी महावत उठने से पहले ही कुचल